भारतीय चित्रकला में रसाभिव्यंजना

डॉ सीमा मेहरा
असिस्टेंट प्रोफेसर (चित्रकला विभाग)
कन्या महाविद्यालय आर्यसमाज भूड़, बरेली (उ0प्र0)
ईमेलः drmehraseema@gmail.com

Reference to this paper should be made as follows:
Received: 29-04-26
Approved: 15-06-26

डॉ सीमा मेहरा

भारतीय चित्रकला में रसाभिव्यंजना

Artistic Narration 2026,
Vol. XVII, No. 1,
Article No.23 Pg.198-201

Online available at:
https://anubooks.com/journal-volume/artistic-narration-june-2026-vol-xvii-no1

Referred by:
DOI:*https://doi.org/10.31995/an.2026.v17i01.023*

सारांश

सौन्दर्यानुरागी मानव के जीवन का कोई भी पक्ष लालित्य से अछूता नहीं रहा है। चित्ररचना भी इसका प्रमाण है चित्रकार ने अपने विषयों को चित्रों में सौन्दर्यपूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान की है। चित्रकला में आनन्द का सौन्दर्य को ही रस माना गया है। रस की परिकल्पना के पार्श्व में मनीषियों व विचारकों की तत्वानवेषी वृत्ति है। भारतीय कला में आनन्द की परमानुभूति सत्यं, शिवं, सुन्दरं के माध्यम से हुई है। चित्रों में रसाभिव्यंजना को भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में व्यंजित रसोद्रेक प्रक्रिया का आधार प्रदान किया गया है। भाव व रस की उत्पत्ति व चित्र का रसमय होना चित्र में अनिवार्य माना गया है। सहृदय मानव इसी रस का आस्वादन करता है।

भारतीय चित्रकला के परिप्रेक्ष्य में आदिकाल से ही चित्रों का रसमय होना परिलक्षित होता है। यहाँ के चित्रकारों की तूलिका से कोई भी रस अभिव्यंजना की दृष्टि से अछूता नहीं रहा है। प्रत्येक शैली के चित्रों में विभिन्न रसों का पूर्ण परिपाक हुआ है।

रसाभिव्यंजना से परिपूर्ण चित्रों के निःसीम सागर में आकर सहृदय दृष्टा रससिक्त होकर उसमें खो जाता है। विभिन्न शैलियों के चित्रों में रसों के आस्वादन का अध्ययन ही शोध पत्र में करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द

रस, अभिव्यंजना, दृष्टा, सौन्दर्य, भाव, अस्वाद, अनुभूति

https://doi.org/10.31995/an.2026.v17i01.023

प्रस्तावना

प्राचीन काल से ही मानव की भावाभि व्यक्ति का माध्यम रही चित्रकला में चित्रकारों ने रसाभिव्यंजना को परिपुष्ट किया है। भारतीय चित्रकला का विशिष्ट अन्वेषण रस हैं इसका संस्कार आदिकालीन है। तैत्तिरीय उपनिषद में ब्रहम को ही रस कहा गया है। रस का सर्वप्रथम विचार भरतमुनि ने अपने ग्रन्थ ''नाट्य शास्त्र'' में किया है। चित्रों में भावों द्वारा रस की उत्पत्ति और सहृदय दृष्टा द्वारा उसका आस्वादन ही सौन्दर्य व आनन्द का सर्वोत्कृष्ट स्वरूप स्वीकार किया गया है। रसविहीन कलाकृति को प्राणहीन मानव के समान माना गया है।

भारतीय चित्रकला सम्पूर्ण रसों से परिपूर्ण है। यहाँ के चितेरों की तूलिका से कोई भी रस अछूता नहीं रहा है। भारतीय चित्रकला के विशाल प्रांगण में पल्लवित व परिपोषित शैलियों के चित्र रसाभिव्यंजना की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट है जो सहृदय दृष्टा को रसविभोर कर उसका आस्वादन करते हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

सौन्दर्यानुरागी मानव सुन्दरतापूर्ण अवयवों को देख प्रसन्नता का अनुभव करता है तथा उन्हें प्राप्त करने के लिए लालयित हो उठता है। ललित कलायें मानव की सौन्दर्य अराधना और उपासना का दर्पण है। मानव के धरती पर अवतरण के साथ ही उसमें सजावट की प्रवृत्ति जाग्रत हो गई थी। कला इतिहास इस तथ्य का प्रमाण है।

भारतीय कला चिन्तन का विशिष्ट अन्वेषण रस है–जिसकी परिकल्पना के पार्श्व में भारतीय विचारकों की तत्वान्वेषी वृत्ति का व्यापक परिवेश है। रस का संस्कार आदिकाल से दिखाई देता है।

साधारणतः रस शब्द का प्रचलन सरल व सामान्य रूप में पाया जाता है परन्तु इसका संस्कार आदिकालीन है। भारतीय कला में सौन्दर्य उसका प्राण है इसमें सौन्दर्य को आनन्द व रस का ही पर्याय माना गया है।

भारतीय दृष्टिकोण से कला का उद्देश्य आनन्द की ही नहीं परमानन्द की प्राप्ति है। कला में परमानन्द की प्राप्ति ही रस है।

भारतीय साहित्य में सौन्दर्य को ही रस के रूप में व्यंजित किया गया है और इसी रसाभिव्यंजना को चित्रकला में अपनाया गया है। सम्पूर्ण भारतीय चित्रकला रसमय है।

भारतीय चिन्तन में रस की अवधारणा विश्व क सौन्दर्य शास्त्र के बहुत ही महत्वपूर्ण परिदान है।

रस भारतीय संस्कृति और साहित्य के चरम विकास से सम्बन्धित है। भारतीय जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में रस का प्रयोग सर्वोत्कृष्ट तत्व के लिए किया गया है। भारतीय संस्कृति के प्राचीन ग्रन्थ वेदों में भी रस का प्रयोजन मधु, दुग्ध, सोम, जल अदि पदार्थों के लिए किया गया है।

तैत्तिरीय उपनिषद में स्वयं ब्रहम को ही रस कहा गया है। उपनिषदों के साथ ही रस संज्ञा का प्रयोग दर्शनशास्त्र के अन्तर्गत भी हुआ और सांख्य शास्त्रियों ने अपनी विषय पद्धति में पंच महाभूतों को प्रकृति पर विचार करते हुए ज्ञात–निरपेक्ष वस्तु मात्र के लिए इस संज्ञा को प्रयुक्त किया।

सामान्यतः फल–फूलों से निकले द्रव पदार्थों को भी रस कहते है। किन्तु कला के सौन्दर्य में इसका अर्थ कला में अभिव्यंजननीय वस्तु होता है। भरतमुनि का नाट्यशास्त्र रस विवेचन का प्राचीनतम ग्रन्थ है इसमें प्रस्तुत रस सिद्धान्त का प्रयोग कला के अन्तर्गत होता है। भरतमुनि ने निभ्रान्ति रूप में रस के महत्व पर बल देते हुए कहा है कि रस के बिना कोई अर्थ परिवर्तित हो ही नहीं सकता।

डॉ सीमा मेहरा

चित्र में रस मानव शरीर आत्मा के सदृश है। भरतमुनि ने अपने नाट्य शास्त्र में 'विभावानुभावव्यभिचारी संयोगादि' रस सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है।

दण्डी के अनुसार विभावादि सामग्री ही स्थाई भावों को रस कोटि तक पहुँचा देती है। रूद्रट के अनुसार विचार से आस्वाद्यता को प्राप्त होने वाली कोई भी वृत्ति रस हो सकती है। अभिनव गुप्त भाव व रस को एक मानते है। विभिन्न भारतीय विचारकों ने अपनी–अपनी दृष्टि से रस के स्वरूप को निर्धारित किया है। चित्रकला विभाव, अनुभाव व संचारी भावों के सहयोग से उत्पन्न स्थाई भाव ही रस है तथा इसका अभूतपूर्व निरूपण भारतीय चित्रकला में परिलक्षित होता है। समस्त कला शैलियाँ रसस्क्ति है।

काव्य की भाँति चित्रकला में भी नौ रसों को अभिव्यक्ति मानी गई है। भारतीय चित्रकला की समस्त शैलियाँ रस प्रधान है।

भारतीय मनीषियों ने रस, सौन्दर्य व आनन्द को लगभग पर्याय माना है। आनन्दमयी चेतना की अनुभूति ही रस है और रस का आधार भाव है। भारतीय चित्रकला में रसानुभूति व्यक्तिगत नहीं अपितु समिष्टगत भी है। संसार का कोई भी सहृदय दृष्टा भारतीय कला की सुकुमारता से अभिभूत होकर तद्गत रसदशा तक पहुँचे बिना नहीं रह सकता है यही चित्रकला के रसानुभूतिकला है।

भारतीय रस सिद्धांत में रसानुभूति की सत्ता भाव सत्ता के आधार पर स्वीकृत है। भाव और विभाव के सामंजस्य के रहित पूरी व शुद्ध रसानुभूति असम्भव है। रस में भावों की अभिव्यंजना के लिए अभिव्यक्ति के अतिरिक्त प्रकाशन शब्द का प्रयोजन भी हुआ है। रसाभिव्यंजना चित्रकला की आलौकिक विशेषता है। सहृदय दर्शकों के हृदय को रससिक्त करते हुए उन्हें आलौकिक व विलक्षणता का आस्वादन कराना इसकी अपनी उपलब्धि है।

श्रृंगार रस को कलाकृति में प्रिय के प्रति मनोहर चेष्टाओं द्वारा दर्शाया जाता है। प्राचीन मूर्तिकला, चित्रकला एवं लघुचित्र शैलियों में अनेक उदाहरण दर्शनीय है। रीतिकालीन श्रृंगारिक साहित्य व काव्य ग्रन्थों से प्रेरित होकर चित्रकार ने नायक–नायिकाओं के प्रेम को प्रबल उत्कण्ठा को प्रदर्शित किया है। श्रृंगारिक चेष्टा तथा नेत्रों एवं मुख मुद्राओं व भावों के माध्यम से आधुनिक कलाकार लक्ष्मण पै ने एकाकी नारी आकृति के सहयोग से श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति की। श्रृंगार के अतिरिक्त अन्य रस करूण, रौद्र, शान्त, वीभत्स आदि को भी प्रागैतिहासिक अंकन चित्रों में द्रष्टव्य होता है। मानव ने तत्कालीन जीवन से जुड़े विषम गुफाओं की दीवारों पर उकेरे है जिसमें आखेट दृश्यों की प्रचुरता है जिसमें वीर रस के अंकन को अभिव्यक्ति मिली है। अजन्ता के विश्वविख्यात भित्तिचित्र अपने अनुपम रूप सम्पदा से दर्शकों का मन्त्र मुग्ध कर देते है। यहाँ के कलाकारों ने अपने रचना कौशल से चित्रों को रस से ओतप्रोत कर दिया है। यहाँ महात्मा बुद्ध के जीवन से जुड़े होने के कारण यहाँ के विषयामिव्यक्ति के शान्त रस प्रधान है। करूण रस को प्रस्तुत करने के लिए शोक संतृप्त याचनामय खिन्न अश्रुपूर्ति नेत्रों से युक्त आकृतियों का अंकन होता है। इसमें क्षमा याचना चित्र दर्शनीय है। इस चित्र में कोमलांगी स्त्री एक विशालकाय सजा के चरणों में गिरकर दया की भीख माँग रही है इसमें पीड़ा से उद्भुत करूण रस की अभिव्यक्ति दी गई है। मुगल काल के चित्रों बादशाहों के शदीह चित्रण में उत्साह भाव के उदाहरण है।

केशवदास, मतिराम, जयदेव, बिहारी आदि कवियों की श्रृंगारिक रचनाओं पर आधारित मध्यकालीन राजस्थानी व पहाड़ी चित्रकला शैलियों में श्रृंगार के संयोग व वियोग दोनों पक्षों के अप्रतिम चित्र उपलब्ध किया

https://doi.org/10.31995/an.2026.v17i01.023

है। वहाँ के चितेरों ने राधा–कृष्ण को लौकिक नायक–नायिका रूप में शास्त्रीय बन्धन में बाँधकर कला रसिकों को रसान्वित किया है। उनकी लीलाओं का मनोहारी रूप प्रस्तुत किया है। बसौली शैली में गोवर्धन पर्वत उठाने का चित्र अद्‌भुत रस की व्यंजना करता है।

निष्कर्ष

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारतीय चित्रकला सम्पूर्ण रसों से अभिपूरित है यहाँ चित्रकार की तूलिका से कोई भी रस अछूता नहीं रहा है। यहाँ के कुशल चितेरों न सजीव–निर्जीव सभी वस्तुओं में सजीवता लाते हुए प्राण प्रतिष्ठा की है इनमें कलात्मक सृजन का रसमय होना दृष्टिगोचर होता है। सौन्दर्यात्मक जगत में जो महत्व सौन्दर्य का है और धर्म में ईश्वर का चित्रकला में वहीं महत्व रस का है। रस विहीन चित्र निरर्थक प्रतीत होता है। भारतीय चित्रकला के विशाल प्रागंण में आकर दृष्टा रससिक्त हो उसके कलामय रसात्मक संसार में खो जाता है।

संदर्भ

1. डॉ. जयदेव सिंह भारतीय संस्कृति में ललित कला का महत्व।
2. प्रो. रणवीर सक्सेना, भारतीय कला सौन्दर्य और जीवन पृ0 सं0–**150**।
3. डॉ. सुरेन्द्र बारलिगोः सौन्दर्य तत्व ओर काव्य सिद्धान्त पृ0 सं0–**60**।
4. काव्यादर्श 21281।
5. अभिनव भारती भाग–1, पृ0 सं0–**290**।
6. शची रानी गुर्टुः कला दर्शन पृ0 सं0–**358**।
7. रसो वै सः। तैत्तिरीयोपनिषद् शन।
8. भारतीय आधुनिक कलाः डॉ. किरण प्रदीप।
9. सौन्दर्यः डॉ. राजेन्द्र वाजपेयी।
10. भारतीय चित्र कला का इतिहासः डॉ. अविनाश बहादुर वर्मा पृ0 सं0–**20**।
11. शब्द शिल्पी अन्तर्राष्ट्रीय शोध–पत्र संकलन, अंक–1।
12. कला विलासः डॉ. आर. ए अग्रवाल।